॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे प्रभु! तू कल्याण करने वाला है। तूने ऋषि-मुनियों का कल्याण किया है। विधाता! तू हमारा भी कल्याण कर। तू हमें भी यहाँ से ले चल, जहाँ एक-दूसरे की त्रुटि हो, एक-दूसरे पर क्रोध न्यौछावर किया जाता हो, यह संसार मुझे नहीं चाहिए। मुझे तो वह कजली वन चाहिए, जिस कजली वन में सिंह दहाड़ते हों। जहाँ हाथी ध्वनियाँ कर रहे हों। जहाँ विधाता! नाना सिंह ध्वनियाँ करते-करते उस अमूल्य आत्मा के द्वारा, वेदों का श्रवण करने वाले हों। आज के मानव से ये सिंह ऊँचे हैं जो ऋषि-मुनियों की वार्ता का पान करते हैं।

हे प्रभु! मेरा अङ्ग-प्रत्यंग सर्वत्र इन्द्रियाँ यद्यमय हों। मेरे जीवन का एक-एक सङ्कल्प यज्ञमय हो। आज मैं विकल्पों में नहीं जाना चाहता, जो जीवन को नष्ट कर दें। परन्तु प्रभु! मुझे अपने सङ्कल्पों को यज्ञमय बनाने के लिए सहायता की आवश्यकता है। जैसे यज्ञशाला को रचाने के लिए यजमान की आवश्यकता है। जैसे यज्ञशाला को रचाने के लिए यजमान को ब्रह्मा की आवश्यकता है। इसी प्रकार आज अपने जीवन को यज्ञमय बनाने के लिए किसी की सहायता लेना चाहता हूँ। परन्तु मुझे कोई ऐसा प्रतीत नहीं देता जिसकी में सहायता लूँ, मुझे तो केवल प्रभु ही ऐसा प्रतीत देता है जिसका यह संसार यज्ञ है। मैं उस परमपिता परमात्मा को अपना स्वामी बनाना चाहता हूँ। मैं किंचित् बुद्धि वाला एक यजमान बनना चाहता हूँ।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 544 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 619
वर्ष : 46 44 समग्र वर्ष : 52

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. प्रभु की सर्वत्रता	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-21
4. वाजपेयी-याग	पूज्यपाद-गुरुदेव	22-34
5. एक ही सूत्र के दो मनके	पूज्यपाद-गुरुदेव	35-36
6. रेतस और प्राण	पूज्यपाद-गुरुदेव	37
7. ऋषियों के उद्‌गार		38
8. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायाग का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 18 फरवरी, 2018 से 25 फरवरी, 2018 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पञ्जी.)

आप सभी को नववर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ।

।। ओ३म् ।।

प्रभु की सर्वत्रता

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति उस वेद वाणी का प्रसारण करते चले जा रहे थे, जिस पवित्र वेद वाणी में उस महामना परमपिता परमात्मा की महानता और उसकी व्यापकता का वर्णन आ रहा था। क्योंकि संसार की कोई स्थली ऐसी नहीं है जहाँ वह परमपिता परमात्मा न हो। समुद्र की कोई भी तरङ्ग ऐसी नहीं है, पर्वतों की कोई गुफा ऐसी नहीं है, जहाँ वह प्रातःकाल की पवित्र अग्नि बन करके इस संसार को ज्योतिमयी बनाता रहता है। वह कितना अनुपम है जो सर्वत्रता में एक ज्योति है। हमारा वेद का मन्त्र यह कहता है कि हे प्रभु! प्रातःकाल की अग्नि बन करके हमें आप प्रकाशित कर रहे हैं, क्योंकि तेरा जो अनुपम प्रकाश है वह प्रातःकाल की पवित्र अग्नि कहा जाता है। अग्निमयी ज्योति बनकर के तू प्राचीदिक् बन करके ही हमें अनुपम प्रकाश दे करके, तेरा ही अनुपम यह प्रकाश हमें दृष्टिपात आ रहा है। जब प्राची से हम द्वितीय दिशा को गति करते हैं, तो हम प्रायः हम दक्षिणायन में पहुँच जाते हैं; दक्षिणायन में जब जाते हैं, तो प्रभु! तुम इन्द्र बन करके हमारे जीवन को ज्योतिमयी, प्रकाशमयी बनाने वाले हो। तुम इन्द्र हो, इन्द्र जहाँ परमपिता परमात्मा को कहा जाता है, वहाँ इन्द्र नाम विद्युत को कहा गया है। वह जो विद्युत् है वह इतनी पवित्र है, जब वह विद्युत् द्यौ बन करके दिशाओं को, जल के परमाणुओं को ले करके वह प्रातःकाल की आभा में, क्योंकि उस **प्रभु का तो सर्वत्र काल ही प्रातः है।** वह दक्षिणायन से जब उत्तरायण को परमाणुवाद गति करता है, वह समुद्रों से जलों को ले करके, आप ही प्रभु इन्द्र बन करके धीमी-धीमी वृष्टि प्रारम्भ कर देते हैं। वही वृष्टि देवत्व को

प्राप्त हो करके, नाना प्रकार के व्यञ्जनों को जन्म दे देती है। मानव का जीवन प्रफुल्लित हो जाता है, आनन्दवत् में ग्रहण करने लगता है और यह कहता है कि हे व्यञ्जनों वाली! हे दक्षिणायन! तू हमारे जीवन को प्रकाशमय पहुँचा रही है। परन्तु वह जो प्रभु है, वह इन्द्र बन करके रहता है, प्रातःकाल में वही इन्द्र वृष्टि के मूल में रहता है, दिशाओं का प्रतिनिधित्व करने वाला है। तू दक्षिणायन से उत्तरायण को गति करके ही सोम की वृष्टि करता है। सोम को ऋषि-मुनि अपने में ग्रहण करते रहते हैं। प्रातःकाल को जब सोम की उपासना करते हैं, ब्रह्म वाचों व्यवास्ते वही तो उत्तरायण में सोम बन करके रहता है। उत्तरायण में अग्नि बन करके प्रभु प्रकाश के द्योतक हैं और दक्षिणायन में इन्द्र बन करके वह वृष्टि के सोम को, वृष्टि के रूप में सोम को उत्तरायण में प्रदान कर देते हैं। वही उत्तरायण में गति करता हुआ वही परमाणु वही मङ्गलम् बृह्म वह प्रतीची-दिक् में प्रवेश कर जाता है। वह जो **प्रतीचीदिक् है वही तो अन्नादि का भण्डार कहा जाता है।**

वरुण के स्वरूप

हे प्रभु! तुम कितने वैज्ञानिक हो, हे प्रभु! तुम कितने महान् हो, वही सोम, वही दक्षिणायन से गति करता हुआ परमाणुवाद जब परिक्रमा की इस आभा में रत्त होता है तो वही पश्चिमायन दिशा में अपने में प्रतीचीदिक् बन करके, जब प्राचीदिक् बन करके सोम की क्या वह अन्न के रूप में वह वरुण बन करके रहता है। वरुण हमारे वैदिक साहित्य में जल को भी कहा गया है। वरुण नाम प्रभु को भी कहा गया है और वरुण नाम प्राचीदिक् दिशा को कहा गया है। वह एक मानववृत्ति कहलाता है उसमें उदीची, उदीचीदिक् रहने वाला है। मुझे ऐसा स्मरण है कि मानो वही तो अन्न की प्रतिभा में रत्त रहने वाला वरुण कहलाता है। हे वरुण! तू आ, हमें तू–हमारे भण्डार में परणित हो जा, हमारे बुद्धियों का जो निर्माण करने वाला अन्नादि है जिससे मन की प्रतिभा

का जन्म होता है। ऋषि-मुनि जब इस अन्नादि के ऊपर देखो इस वरुण के ऊपर अनुसन्धान करने लगते हैं तो अनुसन्धान करते-करते बहुत दूर चले जाते हैं। विचारते रहते हैं कि वह कैसा अनुपम है, यही तो बुद्धि का प्रतिनिधि है, यही तो मन की धाराओं को जन्म देने वाला है।

मुझे वह काल स्मरण आता है कि एक समय सोभनी ऋषि महाराज भयङ्कर वनों में विद्यमान हो करके, वरुण की उपासना करने लगे, वरुण के ऊपर अनुष्ठान करने लगे। प्राचीदिक् के ऊपर अनुष्ठान करने लगे कि मैं अन्नादि को ही पवित्र पान करना चाहता हूँ। तो वह नाना वृक्षों के रूप में, स्थावर सृष्टि के गर्भ में जब प्रवेश हुए, तो उन्होंने कुछ औषधियों का ज्ञान प्राप्त किया। उन औषधियों को वह जल मे विदीर्ण करके, अग्नि में तपा करके जब पान करते रहे तो बुद्धि पवित्र बन गई, बुद्धि सूक्ष्मतम बन गई। जब अहिंसा के आङ्गन में मानव प्रवेश करता है, अहिंसा की प्रतिभा में प्रवेश करता है तो वह वरुण की उपासना करता हुआ और वरुण 'ब्रह्म अन्नादाम् भूतम्' तो अन्न कहलाता है, वही तो अन्नाद है। यह जो वृति देवाम् जब सोम को ले करके गति करती है तो वही अन्नाद प्राचीदिक् बन करके उसी में रत्त हो जाते हैं। सोभनी ऋषि महाराज ने इसके ऊपर अपना अन्वेषण किया है अथवा विचार दिया है कि यह नाना प्रकार के बाह्य साकल्यों को जन्म देने वाली है, यही प्राचीदिक् है, यही मुनिवरो! वरुण है जो प्राण का द्योतक कहलाता है। जैसे मुनिवरो! गौ को दुहने वाला दुग्ध को प्राप्त करता रहता है, इसी प्रकार वरुण को दुहने वाला, वरुण को अपने में धारण करने वाला, अन्नाद् को अपने में ग्रहण करता रहता है। अन्नाद् को ग्रहण करके उसकी प्रकृति को दुहता रहता है अपने में, प्राची में प्रवेश कर जाता है। वह 'वरुण स्वायम् ब्रह्महें' वरुण को प्रभु की आभा में दृष्टिपात करने लगता है। जब उन्होंने 'अश्रुतम् ब्रह्मवाचाः' सौभनी ऋषि महाराज ने इन्हीं साकल्यों को ले करके अग्नि को प्रदीप्त किया और अग्नि को प्रदीप्त करके 'याज्ञाम् भविते लोकाम्'

वह याग में परणित हो गए। याग में परणित हो करके नाना प्रकार के रूपों में साकल्यों को अग्नि में प्रदान किया, तो जब उनका भेदन हुआ, परमाणुवाद का भेदन हुआ तो मुनिवरो! देखो वह दिशाओं को पवित्रतम करता चला गया।

विचारने से प्रतीत हुआ कि यह जो वरुण है वह जहाँ प्रभु है वहाँ अन्नाद् है जो मन को, बुद्धि को दोनों को पवित्र बनाने वाला है, अन्तःकरण में, चित्त के मण्डल में जो नाना प्रकार के संस्कारों की उपलब्धियाँ होती रहती हैं, उन उपलब्धियों में अशुद्धियों को नष्ट करने वाला है। यही जब अनुष्ठान के रूप में इनको पान करते हैं और जब इनकी शरण में जाते हैं तो वह मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण कर लेते हैं। क्योंकि मोक्ष की पगडण्डी किसे कहते हैं? जो प्रभु के द्वार पर जाने का एक मार्ग है, एक पगडण्डी है वह शोधन करते-करते अपने जीवन को वह महान् बनाते रहते थे। वही वरुण के समीप जाते हैं तो उसके पश्चात् हमें सोम की प्राप्ति हो जाती है।

सोम का पान

मेरे पुत्रो! तुमने दृष्टिपात किया होगा जब प्रातःकाल में आचार्य के समीप विद्यमान होते हैं, आचार्य उस समय अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके, वह अग्निहोत्र करके जब वह सोम की वृष्टि करते हैं। आचार्य, पुरोहितजन जब गृहस्वामी के द्वार पर पहुँचे तो गृहस्वामिनी से कहते हैं, हे गृहस्वामिनी! आओ तुम सोम का पान करो। तो मुनिवरो! वह सोम का पान करने के लिए तत्पर हो जाती है और वह वेद की ध्वनि में ध्वनित करने लगते हैं और कहते हैं 'प्रातम् ब्रह्म माम्वृहे वृणास्तुभवे लोकाम् सौम व्रतं ब्रह्मा वाचपृही लोकाम् देवः उदीचीदिक् सोमो ब्रह्मा' हे उदीची के पान करने वाले! आ तू सोम को पान कर, उदीची कहते ऊर्ध्वा में गति करना, जब वह ऊर्ध्वा में गति करता है। जब पुरोहितजन मानव गृह स्वामी और गृहस्वामिनी के समीप

पहुँचते हैं तो वह जैसे आचार्य प्रातःकाल की पवित्र बेला में अपनी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारी से कहता है, हे ब्रह्मचरिष्यामि! आओ तुम गृहस्वामिनी और गृहस्वामी के सन्तुल्य बन करके तुम सोम को पान करने वाले बनो। क्योंकि ब्रह्मचारी ही सोम का पान करता है, जो ब्रह्मचरिष्यामि बनता है, वही सोम को ग्रहण करता है। सोम के कई रूप हमारे वैदिक साहित्य में माने गए हैं। एक तो सोम पृथ्वी को कहते हैं, वह पृथ्वी ऊष्णता में बन जाती है उस समय वह सोम के लिए उपासना करती है और पृथ्वी कहती है, हे देव! मुझे सोम की वृष्टि कराओ, क्योंकि आप मेरे स्वामी हैं। तो स्वामी बन करके क्योंकि मेरे ही शरीरा-अमृतम् व्यञ्जनों को जन्म देने के लिए मुझे मेरे द्वारा सोम की वृष्टि करो। एक तो सोम का दृष्टिकोण आचार्य ने यह स्वीकार किया है कि जब धीमी वृष्टि हो जाती है, मेघ-मण्डलों से सूर्य उसका स्वामी बन जाता है, सूर्य पृथ्वी को सोम देता है। वह जब सोम देता है तो यह नाना प्रकार की सृष्टियों का जन्म हो जाता है। कहीं स्थावर उत्पन्न हो जाती है, स्थावर में नाना प्रकार के भेदन हैं। आयुर्वेद की दृष्टि से जब यह विचारा जाता है कि यह जब सोम की वृष्टि चाहती है, सोम को पान कर लेती है।

सोम वृष्टि

एक समय मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि प्रातःकालीन त्रेता के काल में राजा रावण के राजपुरोहित स्वाति मुनि महाराज और वह उनके वैद्यराज सुधन्वा दोनों प्रातःकाल एक स्थली पर विद्यमान थे। उतने में उनके विधाता कुम्भकरण ने आ करके यह कहा 'मङ्गलों घोषम् वृहीव्रताम्' हे वैद्यराज! मैं यह जानना चाहता हूँ, मैं प्रातःकालीन आज वेद मन्त्रों का उच्चारण अपने में अध्ययन कर रहा था। मैंने यह श्रवण किया है कि जब यह मेरा प्रश्न, जब मुझे संशय बन गया है कि जब यह पृथ्वी सोम को पान कर लेती है, उस समय पृथ्वी के गर्भ से तीन

वस्तुओं का जन्म होता है। महात्मा सुधन्वा ने यह कहा, वैद्यराज ने यह कहा हे राजकुमार! मैं यह जानना चाहता हूँ कि जब यह सोम को पान कर लेती है तो कौन-सी वस्तु को जन्म नहीं देती? उन्होंने कहा, प्रभु! उनको मुझे गणना में लाइए। उन्होंने कहा, चारों प्रकार की सृष्टियों को जन्म दे देती है। अब चारों प्रकार की सृष्टियों के मानो द्वितीय में पञ्चम सृष्टि का कोई वर्णन नहीं आता। कहीं भी वैदिक साहित्य में पञ्चम सृष्टि का वर्णन नहीं आता। जब पञ्चम सृष्टि का वर्णन नहीं आता, तो मैं उसको उद्गीतता में कैसे गा सकता हूँ। जब सुधन्वा ने यह वाक् प्रकट किया, तो वह मौन हो गए और यह कहा कि जब यह पृथ्वी नाना प्रकार के सोम को पान कर लेती है तो यह चारों प्रकार की सृष्टियाँ उद्बुद्ध हो जाती हैं, जिसको हमारे यहाँ देखो स्थावर के रूप में नाना प्रकार का वनस्पति विज्ञान है। उसी के द्वितीय रूप में अण्डज सृष्टि का प्रादुर्भाव हो जाता है। अण्डज सृष्टि के पश्चात् वही पृथ्वी की तरङ्गें प्रत्येक प्राणियों के हृदय में प्रवेश हो करके एक प्राणी, प्राणी के गर्भ में प्रवेश हो करके नाना व्यञ्जनों को जन्म देने वाली, यही तो सोम वृष्टि कहलाई जाती है, यही तो सोम कहलाता है।

सोमलता

महात्मा सुधन्वा वैद्यराज ने कहा, एक समय बहुत पुरातन काल हुआ, जब मेरी आयु युवा थी, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा औषध विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान कर रहा था; औषध विज्ञान के ऊपर अनुसन्धान करता हुआ मैं एक समय पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा भयङ्कर वन में हिमालय के द्वार पर पहुँचा। जब हिमालय में एक अश्वतम् वज्र का स्वॉति था, उसके मध्य में एक स्थावर वृक्ष विद्यमान है। मैंने कहा भगवन् यह कौन सा वृक्ष है, कौन सी वनस्पति है? उन्होंने कहा यह वह वनस्पति है जिसको पान करने से मानव के हृदय में, मानव के शरीरों में नाना प्रकार की उज्ज्वल तरङ्गों का जन्म हो जाता है। इसको पान

करता हुआ मानव अपनी प्रवृत्तियों को स्थिर बना लेता है। योगी पान करता है तो अपनी प्रवृत्तियों को स्थिर बना लेता है। वैद्यराज पान कर लेता है, तो वैद्यराज की बुद्धि प्रखर बन जाती है। देखो माता-पिता इसको पान कर लेते हैं तो बाल्य ब्रह्मचारियों को ऊर्ध्वा में शिक्षा देना प्रारम्भ कर देते हैं। रुग्ण वाला इसको पान कर लेता है, तो सर्वत्र रुग्ण उसके समाप्त हो जाते हैं। जब मेरे पूज्यपाद ने मुझे यह वाक् प्रकट किया, तो मैं यह विचारने लगा कि यह वनस्पति विज्ञान तो बड़ा विशाल है, स्थावर सृष्टि तो एक प्रकार का विशाल वन है। मैं इस वन में जाने के लिए व्रतीमबृहा तो उन्होंने कहा कि हे पुत्र! यह सोमलता कहलाती है, इसे हम सोम कहते हैं इसके प्रत्येक अङ्ग को ले करके जब अग्नि में तपा करके हम एक वर्ष तक पान कर लेते हैं तो योगी की प्रवृत्ति देखो स्थिर बन जाती है। जब माता-पिता पान कर लेते हैं तो उनके गृहों में एक पुष्पों की उत्पत्ति हो जाती है। इसी को पान करने वाला अपने में वैद्यराज की बुद्धि देखो नाना प्रकार की औषधियाँ अपने गुणों का वर्णन करना प्रारम्भ कर देती हैं। यह सोम सब लताओं में और स्थावर सृष्टि में सबसे प्रथम यह सबका धिराज कहलाता है। तो इस प्रकार वह बोले कि जब मेरे पूज्यपाद ने मुझे यह वर्णन कराया तो मैंने ही इसका अनुसन्धान करते हुए पान किया। बारह वर्ष का मैंने तीन-तीन समय अनुष्ठान किया। तो मेरे विचार में यह आ गया कि स्थावर सृष्टि के विज्ञान को जानने वाले इस प्रकार का क्रियाकलाप बनाते रहते हैं।

आध्यात्मिक सोम

बेटा! मैं सुधन्वा के उस काल में तो जाना नहीं चाहता हूँ, औषधि विज्ञान में भी नहीं जाना चाहता हूँ। विचार केवल यह देना चाहता हूँ कि मुनिवरो! सोम की वृष्टि करने वाला एक तो वह सोम कहलाता है, जो बाह्य-जगत् में सोम को पान करने वाले हैं, वह अपनी-अपनी दिशाओं को प्राप्त कर लेते हैं। एक सोम यह आध्यात्मिकवादी

कहलाता है, आध्यामिक विज्ञानवेत्ता जब इस मङ्गलम् बृहे जब उदीची में प्रवेश करता है, 'उदीची दिग्सौमम् ब्रह्म वाचाः' उदीचीदिक् सोम का पान करता है, वह ऊर्ध्वा में गति उड़ान उड़ता हुआ वह उदीची में प्रवेश कर जाता है। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था कि जब भगवान् कृष्ण ब्रह्मव्रताम् जब वहाँ अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा वह अध्ययन करते थे, तो वह भी यही कहा करते थे कि प्रभु मैं आध्यात्मिक सोम का पान करना चाहता हूँ। समर्पण ऋषि महाराज ने 'मङ्गलम् व्रहे वाचो' देखों उन्होंने उसका उपदेश दिया। यह वाक् मैंने तुम्हें कई काल में प्रकट भी कराया है। वह सोम का पान कराते रहते थे, आध्यात्मिकवाद क्या दर्शनों की प्रतिभा में, दर्शनों की भाषा में अपने आत्मा और परमात्मा के समन्वय की चर्चा करना, वह दोनों का संग्रहण होता है, दोनों का सम्मिलान होता है, उससे जो झरनियाँ झरती हैं, उसको सोम कहते हैं। जैसे हमने एक अध्ययन किया, हमने अध्ययन किया है उदीचीदिक् सोम, जब हम उदीची ऊर्ध्वा में उत्थान करके सोम को हम पान करेंगे तो सोम के पान करने से जो हमें प्राप्त होगा उसको अमृतमयी सोम कहा जाता है, उसको सोम कहते हैं। योगीजन जब अपने पूज्यपाद गुरुओं के चरणों में विद्यमान हो करके गृहस्वामिनी, गृहस्वामी अपने पुरोहित के संरक्षण में, आचार्यों के संरक्षण में उनके चरणों की वन्दना करते हुए वह सोम का पान करना चाहते हैं। जैसे याग प्रारम्भ करने वाला याज्ञिक जब नाना प्रकार के साकल्यों को ले करके याग करता है, नाना साकल्यों का याग करके और जब उससे सुगन्धि उत्पन्न होती है, वह भी तो सोम कहलाता है। जैसे मुनिवरो! प्राण, अपान दोनों का मिलान करता हुआ, दोनों को एक सूत्र में लाता है, तो इस ब्रह्माण्ड को खिलवाड़ जान करके वह उसका दिग्दर्शन करने लगता है। वह भी सोम कहलाता है। तो सोम की ऊर्ध्वा में गति करने वाला एक महान् कहलाता है। वेद का याचक कहता है, भक्तजन कहता है, ऋषि कहता है, हे प्रभु! आप तो सोम हैं, मेरे अन्तर्हृदय में

आप समाहित रहते हैं, मेरे हृदय में जब आप समाहित हो जाते हैं और मैं आपको जान लेता हूँ, तो मैं आपको सोम जान करके ही उसका मैं पान करता रहता हूँ, मैं पान करता हुआ अपने में धन्य बन जाता हूँ, अपने में सौभाग्यशाली बन जाता हूँ तो आप भगवन् सोम कहलाते हैं।

ब्राह्य-जगत में सोम

वही सोम मेघमण्डलों की वृष्टियों में प्रारम्भ होने लगता है, जब याज्ञिक के हृदय में यह एक विडम्बना उत्पन्न हुई कि मैं बाह्य जगत् में सोम को पान करना चाहता हूँ, तो वह वृष्टि याग के काल में प्रवेश कर जाता है। जब वृष्टि याग के कर्मकाण्ड में प्रवेश कर जाता है, अपनी विचित्र भावनाओं को विशुद्ध बना करके, ग्रीष्म ऋतु के समाप्त होने पर जब वह सूर्य की किरणें जो भासने वाला है, किरणें जहाँ टेढ़ी अपने रुपस्य रेखा से द्वितीय रेखा का जब परिवर्तन होता है, तो समुद्रों से जलों का उत्थान हो जाता है। जल का जहाँ उत्थान हुआ, तो वही सोम प्रमाणं बृहेलोकाम् मुनिवरो! वह उससे मेघों की उत्पत्ति हुई, मेघ बना है और मेघ बन करके उसे वैदिक-साहित्य में बकासुर भी कहते हैं। परन्तु यहाँ प्रकरण के आधार पर वह बकासुर मेघों को कहते हैं, जब मेघ ब्रह्म देखो अन्तरिक्ष में जब इन्द्र से ऊँचा समागम होता है, इन्द्र से मिलान होता है तो इन्द्र और गृह वाचन देखो बकासुर दोनों का सँग्राम हुआ तो धीमी-धीमी वृष्टि प्रारम्भ हो गई। वही वृष्टि देखो सोम कहलाती है, जो पृथ्वी उसे पान करती है, प्राणीमात्र पान कर रहा है, चारों प्रकार की सृष्टियाँ पान कर रही हैं, तो वह सोम बन गया है। वह कैसा पवित्र सोम बन गया, 'इन्द्रो समावृणम् ब्रह्मे सौमाः मङ्गलम् बृत्तीहि' मेरे पुत्रो! दोनों के सन्निधान से ही यह परमात्मा की अनुपम सृष्टि का प्रादुरूप बन करके सोम की वृष्टि के मूल में प्रवेश हो गया है। उसे ही तो हमें पान करना है। यही सोम शिशु के रूप में रस बन करके ही मुनिवरो! वह गृह अस्वत बन करके, गृह के प्रकाश का

मूलक बन जाता है। तो मैं विशेष विवेचना में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ, क्योंकि मैं व्याख्याता नहीं हूँ। केवल परिचय देना ही हमारा कर्त्तव्य है। क्योंकि परिचय क्या है प्रभु के ज्ञान और विज्ञान का? क्योंकि परिचय देना यह हमारा कर्त्तव्य है, क्योंकि परमात्मा की इस अनुपम सृष्टि में रचनाकार के आगे कोई बुद्धिमान नहीं है संसार में। क्योंकि वह केवल उसका परिचय दे सकता है, जितना वह जानता है। पूर्णरूपेण जब जानने लगता है तो मुनिवरो! सौम्य सोम की प्रतिष्ठा हो जाती है। वे प्रभु सौम्य हैं, जानने वाला आत्मा सोम बन जाता है, सौम्य सोम में प्रवेश हो करके दोनों मौन हो जाते हैं। विचार-विनिमय क्या मुनिवरो! उदीचीदिग् सोम, उदीची को प्राप्त होने वाला ही सोम कहलाता है, जिसको पान करके हमारा जीवन एक महानता में परणित हो जाता है।

विष्णु की विवेचना

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, मैं अग्रगणीय रूपों गृह वाचन्नवृहो मुनिवरो! ध्रुवा ब्रह्मे विष्णु वोचवृहे, वेद का वाक्य कहता है न्योदामय मन्त्र कहता है 'ध्रुवा विष्णु रुपणाः मङ्गलम् वाचसम्भो लोकम् वृहे व्रात्ती देवाः वेद का वाक्य कहता है कि 'सम्भूति लोकाम् विष्णुः' हे विष्णु तू ध्रुवा में रहने वाला है, हे विष्णु तू ध्रुवा में गति करने वाला है, जो संसार में नम्र बन करके चलता है, जो संसार में ध्रुवा में गति करने वाला है, जो अभिमान को त्यागने वाला है, वही तो विष्णु को प्राप्त होता है, वही तो पालनकर्त्ता के समीप जाने वाला है। माता अपने पुत्र के समीप जब जाती है, पालना में प्रवेश होती है शिशु के तो वह नम्र बन जाती है, वह नम्र बन करके ही मुनिवरो! विष्णु के रूप में वेद का साहित्य ही विष्णु कहता है। परमपिता परमात्मा सर्वत्र रहने से ही वह नम्र है, निरभिमानी है, निसंकोच है, पाप से रहित है, इसीलिए परमपिता परमात्मा विष्णु कहलाता है। वह पालन करने वाला है, पालना में सदैव रत्त रहने वाला। जो भी संसार में पालन करने

वाला है उसकी गति ध्रुवा में रत्त रहती है जैसे वृक्ष पर नाना प्रकार के फलों की उपलब्धियाँ जब हो जाती है, तो वृक्ष अपने आप ही मुनिवरो! उसकी ध्रुवागति बन जाती है और जब वह ध्रुवा में गति करने लगता है तो वह विष्णु के रूप में परणित हो जाता है, वह विष्णु कहलाता है। राजा नम्र बनेगा तो प्रजा का पालन कर सकेगा, उस रूप में वह विष्णु कहलाता है, माता नम्र बनेगी नम्रता से ही वह पालन करती है। परमपिता परमात्मा क्योंकि 'स्वाभिमानी नहीं अवृणम् ब्रह्म लोकाम्' वह स्वाभिमानी है, अपने में नम्र है, अपने में ध्रुवा में है, तो विष्णु कहलाता है। जैसे सूर्य की नाना प्रकार की किरणें ध्रुवा में आती हैं तो पृथ्वी के ऊपर नाना प्रकार की धातुओं और व्यञ्जनों को जन्म देने वाली बन जाती है, वही तो पालन कर रहा है, निर्माणकर्त्ता है, पालनकर्त्ता है, नाना रक्त और स्वर्ण की धातु का निर्माण करने वाला है। वह सूर्य ऊर्ध्वा ऊर्जा को ले करके ही प्रकाश को देने वाला है। वह विष्णु कहलाता है, वह द्यौ से प्रकाश लेता है, वह विष्णु बन जाता है। विष्णु का अभिप्राय यह जो पालन करने वाला है। पालन करने वाली माता विष्णु बन करके रहती है नम्रता 'ब्रह्मे कृतो कृतोष्तम् ब्रह्म लोकाम्' यह विष्णु ध्रुवा में रहता है, अभिमान में मानव की बुद्धि का ह्रास हो जाता है। अभिमान करने वाला प्राणी पालना नहीं कर सकता, अभिमान करने वाला प्राणी अपने में ही अपनेपन को नष्ट करता रहता है, क्योंकि वह दुराग्रही बनने वाला प्राणी अपनेपन को समाप्त कर देता है। वह परमात्मा के समीप जाने वाला है जो उसका उद्देश्य है वह समाप्त हो जाता है।

मुझे स्मरण आता रहता है एक समय काग्भुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि महाराज प्रातःकाल की पवित्र वेला में विष्णु के ऊपर विचार-विनिमय प्रारम्भ करने लगे। लोमश मुनि बोले हे कागाम्! वृद्धम् ऋषिवर यह विष्णु कैसा है, तो काग्भुषुण्ड जी कहते हैं हे ऋषिवर! यह जो विष्णु है यह पालन करने वाला हमारे अन्तर्हृदय में विद्यमान

हो करके, हमें विशुद्ध प्रेरणा प्रदान करता रहता है। उसी प्रेरणा को हम पान करते हुए अपने में नम्र बन करके, हम योगाभ्यास करते हैं। हम प्राण और अपान को मिलान में लाते रहते हैं। प्राण और अपान में हम याग करते रहते हैं और अपने अन्तर्हृदय में विष्णु का दर्शन करते रहते हैं। वह विष्णु पालन करने वाला है इसीलिए उसे हम विष्णु के रूप में परणित करते रहते हैं। काग्भुषुण्ड जी बोले एक समय भगवन्! मैं अपने पूज्य पिताजी और माता के समीप मध्य में विद्यमान था। मैंने अपनी माता से कहा कि माता यह विष्णु कौन है? तो माता ने कहा विष्णु परमपिता परमात्मा है। तो मैंने कहा कि बाल्यकाल में माता विष्णु कौन होता है? उन्होंने उत्तर दिया कि विष्णु वह होता है जो सर्वज्ञ है। सर्वज्ञता का प्रमाण क्या है? उन्होंने कहा कि सर्वज्ञता का यह है कि जितना भी तरङ्गवाद है, जितनी गतियाँ हैं वह अवकाश में हों परमाणुवाद में हों उसके गर्भ में उसके मूल में वह विष्णु ही विद्यमान है, क्योंकि उसका वह पालन कर रहा है, उसको गतिशील बना रहा है। जब मैंने कहा कि हे माता! मुझे भी वह पालना में ही मेरी भी पालना कर रहा है। उन्होंने कहा हाँ पुत्र पालना वही करता है। मैंने श्रवण किया है कि माता पालन करने वाली है तो तब माता ने कहा नहीं; मुझे भी प्रेरणा देने वाला वह परमपिता परमात्मा विष्णु है। यदि मुझे प्रेरणा नहीं देता तो मैं तुम्हारा पालन नहीं कर सकती थी। इसलिए सर्वज्ञता के मूल में वह पालना के रूप में विष्णु ही दृष्टिपात आता रहता है। मेरे अन्तर्हृदय में जहाँ मेरा अन्तःर्हृदय आत्मा है जहाँ अहम् आत्मा है वहाँ उसी के आत्मा के गर्भ में वह विष्णु परमपिता परमात्मा पालन करने वाला विद्यमान है। वही पितरों के रूप में निहित रहने वाला है। जब मैंने लोमश जी! अपनी माता से यह कहा हे माता! क्या विष्णु को हम स्वीकार कर लें? तो माता ने कहा हे बालक! यदि तुम विष्णु को स्वीकार नहीं करोंगे, तो तुम्हारा जीवन अन्धकार में चला जायेगा। अन्धकार वाला जीवन कैसा होता है देखो उसमें अहमता आ जाती

है वह कहता है, मैं ही पालना करने वाला हूँ, मैं ही ममं बृहे, जब ममत्व आ जाता है तो उसे अभिमान आ जाता है, अभिमान में देखो वह अपने में लोलुपता में प्रवेश हो करके उसके अभिमान में वह अपनेपन को समाप्त कर देता है। जब से माता ने जब यह उपदेश दिया, तो मैं विष्णु को इस प्रकार स्वीकार करता हूँ। लोमश जी बोले कि धन्य है ऋषिवर आपका जो सुविचार है वह मुझे बहुत प्रियतम लग रहा है, क्योंकि प्रेरणा के स्रोत में ही वह मेरा देव ही विद्यमान है। जब इस प्रकार मुनिवरो! विवेचना हुई तो विष्णु की विवेचना विप्रियता में देखो व्यापकता में हृदय में समाहित हो गई।

विष्णु कौन है? विष्णु कहते हैं पालन करने वाला हो, चाहे वह सूर्य के रूप में हो, चाहे माता के रूप में हो, चाहे पिता के रूप में हो, चाहे चन्द्रमा सोम देता है, अमृत देता है चन्द्रमा के रूप में हो, चाहे वह आपो के रूप में हो, चाहे उष्णता अग्नि के रूप में हो, चाहे वह पृथ्वी के रूप में क्यों न हो, वह सर्वत्र एक पालना करना ही विष्णु का एक क्रियाकलाप माना गया है, वही विष्णु कहलाता है। ऋषि ने इस प्रकार की विवेचना प्रकट की।

वृहस्पति के स्वरूप

मुनिवरो! आगे कहा सम्भवा लोकाम् ब्रह्म वाचाः ऊर्ध्वम् ब्रह्म, ऊर्ध्वम् ब्रह्म वाचाः ब्रहस्पतम् ब्रह्मः वृताम्। न्योदामय एक मन्त्र मुझे स्मरण आ रहे हैं, यह न्योदामय मन्त्र जब पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में विद्यमान होते, तो प्रातःकाल इस प्रकार के मन्त्रों को उद्गीतता के रूप में वह वर्णन कराते रहते थे, स्मरण कराते रहते थे। लाखों वर्षों का जो न्योदामय मन्त्रों का उद्गीत हम गाते रहते थे, वह स्मरण आता रहता है, वह चित्त के मण्डल में कैसे विद्यमान है। मेरे प्रभु का वह चित्त का मण्डल कितना विशाल है, कितना कोष का स्वामी है जिसमें वह सर्वत्र विद्यमान है। मेरे प्यारे देखो! मैंने बहुत पुरातन काल में इन

मन्त्रों को पूर्व काल में उच्चारण किया, परन्तु उनमें प्रथम मन्त्रों ब्रह्मः मुनिवरो! उदीची सम्भवा लोकाम् ऊर्ध्वा दिक् वृहस्पति, ऊर्ध्वा में वृहस्पति रहने वाला है। न्योदामय बहुत से मन्त्र हैं वृहस्पति के, वृहस्पति सम्भवां लोकाम् ब्रह्म वृहस्पति उत्तरो गमन ब्रह्मी आत्मा वृहस्पति सन्जलोकों अस्वताम् शिक्षा भू सम्भवा लोकम् वृर्था स्वस्तः। इस प्रकार वृहस्पति की चर्चाएँ न्योदामय मन्त्रों में और गृह सूत्रों में भी इसका वर्णन आता है। यह नाना प्रकार की सँहिताओं में शाखाओं के रूप में भी इसका वर्णन आता रहा है। **वृहस्पति नाम मुनिवरो! आचार्यजनों को कहा जाता है,** साधारण रूप में वृहस्पति नाम आचार्यों का है जो ब्रह्मचारी को अपने गर्भ में धारण करके उसे अपने तीन दिवस तक गर्भ में धारण करके शिक्षार्थी बना देते हैं। यह एक बड़ी विचित्र वार्ता है कि देखो जैसे माता के गर्भस्थल में शिशु रहता है नौ माह तक, इसी प्रकार तीन दिवस तक आचार्य अपने गर्भ में उसे धारण करता है और विचार आता है कि माता के गर्भ में तो निर्माण होता है, आचार्य के गर्भ में कैसे रहता है? यह पूर्णांग तो मुझे ऐसा स्मरण है जो आचार्यों ने वर्णन कराया है जैसा उसके ऊपर अनुसन्धान किया गया है। विचित्रताम् भविलोकाम्, जैसे वनस्पति है, आचार्यजन हैं। ब्रह्मचारी विद्यालय में प्रवेश हुआ, विद्यालय में जाते ही वह तीन रात्रि मौन हो जाता है और तीन रात्रि मौन हो करके अपने गर्भ में धारण कर लेता है। गर्भ का अभिप्राय यह है कि बाल्य उसकी संरक्षता में रहता है, उसी की आज्ञा का पालन करता है। उसकी आज्ञा के बिना कोई भी क्रियाकलाप नहीं करता, जैसे माता के गर्भस्थल में प्रिय बालक पनप रहा है, बिना माता की आज्ञा के वह बालक, प्रेरणा के कोई उद्गीत नहीं गाता। परन्तु देखो वह जो आहार करती है वह ही आहार करता है, जो मानो उसका क्रियाकलाप बाह्य जगत में होता है वह करता है, माता यदि विष देती है उसी को वह पान करता है, यदि माता ऊष्ण वस्तुओं का पान कर रही तो उसे पान कर रहा है, वह

इतना संरक्षण में रहता है। इसी प्रकार देखो आचार्य के तीन रात्रियों में जो आचार्य क्रियाकलाप करता है, वही ब्रह्मचारी करता है, उसी की आज्ञा का पालन करता है। आचार्य प्रातःकालीन अपने आसन से पृथक् हुआ, पृथक् हो करके न्योदामय मन्त्रों का उच्चारण करता तो ब्रह्मचारी भी उसे दृष्टिपात करता है। वह याग करता है तो ब्रह्मचारी दृष्टिपात कर रहा है इन्द्रियों का शोधन कर रहा है तो ब्रह्मचारी उसे पान कर रहा है वह अपने आसन पर विद्यमान होता है तो ब्रह्मचारी भी उसी प्रकार आसन पर विद्यमान हो जाता है। आचार्य अपने में अन्न पान करता है तो ब्रह्मचारी भी कर रहा है। इसी प्रकार वह आचार्य वृहस्पति के रूप में परणित हो जाते हैं।

अब वह तीन रात्रि, तीन दिवसों की तीनों में यह सर्वत्र जगत् निहित रहता है। तीन रात्रियाँ क्यो हैं? रात्रियों का अभिप्राय यहाँ यह है कि तीन रात्रियों में तीन प्रकार के अन्धकार मानव के समीप होते हैं। रजोगुण के रूप में, सतोगुण के रूप में, तमोगुण के रूप में, यह तीनों प्रकार तीनों रूपों में मोक्ष की पगडण्डी के लिए तीनों अन्धकार के रूप में परणित रहते हैं। इन तीनों में तीनों के लिए तीन रात्रि का उन्होंने गठन किया है। जैसे तीन ताप होते हैं, उन तीन तापों के लिए भी तीन रात्रि का गठन किया है। उन्होंने आत्मा परमात्मा प्रकृति तीन पदार्थों के रूप में भी तीन रात्रि ली हैं। तो मैं कहाँ तक उच्चारण करूँगा, यह तो विशाल वन है। विचार-विनिमय केवल यह कि वह वृहस्पतिजन मानो आचार्यजन ब्रह्मचारी को तीन रात्रि अपने गर्भ में धारण करती रहती है और धारण करके उसके जो कि रात्रि में उसे अपने संरक्षण से विद्यार्थी बना देती है, गोमेध याग कर देते हैं, चौथे दिवस गोमेध याग होता है और गोमेध याग का अभिप्राय यह है कि गो + मेध, गो नाम अन्धकार का है और मेध नाम प्रकाश का है या मेध अन्धकार को कहते हैं, गो नाम प्रकाश को कहते हैं। यह दोनों शब्द एक-दूसरे के पूरक कहलाते हैं, अन्धकार नहीं होगा तो प्रकाश

नहीं रहेगा, प्रकाश नही होगा तो अन्धकार का कोई मूल नहीं रहेगा। इसी प्रकार चतुर्थ दिवस में गोमेध याग करके ब्रह्मचारी को शिक्षार्थी बना देना है, वह उसे उपदेश देना प्रारम्भ कर देता है। हे ब्रह्मचारी! तेरी स्मरण-शक्ति तीन रात्रियों में प्रखर बन गई है, विचित्र बन गई है, अब तू शिक्षार्थी बन। तो मुनिवरो! ऊर्ध्वा ब्रह्म-वृहस्पति मुनिवरो! ऊर्ध्वा में कौन रहता है? वृहस्पति रहता है। प्रत्येक मानव ऊर्ध्वा में वृहस्पति है, मेरे प्यारे! वृहस्पति नाम परमपिता परमात्मा का है जो ऊर्ध्वा में प्रेरणा देने वाला है, वही प्रेरक बन करके मानव की ऊर्ध्वा में गति करता है। शिक्षार्थी बनाता है, विचित्र बना देता है। वह जो वृहस्पति है वह कैसा अनुपम है, कैसा महान् है। मुनिवरो देखो! वृहस्पति ऊर्ध्वा में रहने वाला, ऊर्ध्वा में कौन है, ऊर्ध्वा से सम्मिलान करना ब्रह्मचारी के हृदय से किया है, क्योंकि **हृदय ही वृहस्पति कहलाता है,** सर्वत्र ज्ञान का जो पुञ्ज है स्थिर करने का वह मानव का हृदय कहलाया गया है।

मेरे प्यारे देखो पाँच प्रकार की प्रकृति की अनुपम धाराएँ हैं, उन पाँचों प्रकार की अनुपम धाराओं में सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान उसके गर्भ में निहित रहता है और उसका गर्भाशय क्या है, पाँचों का मानव का हृदय माना गया है। इसीलिए योगीजन पाँच ज्ञानेन्द्रियों का साकल्य बना करके वह हृदयमयी याग करते हैं, हृदय में ही वह प्रतिष्ठित हो जाते हैं। वह वृहस्पति के द्वार पर जा करके, हृदय को वृहस्पति माना गया है। मैं विशाल वन में चला गया हूँ, इतने वाक् मुझे उच्चारण करने का समय नहीं प्राप्त हो रहा है। विचार-विनिमय क्या? जब हम पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अध्ययन करते थे, तो वह हृदय की चर्चा सबसे प्रथम निहित कर देते थे। इसी हृदय में सिमिट करके जब सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान, ज्ञान सिमिट कर हृदय में प्रवेश हो जाता है, तो देखो योगीजन वह महाब्रह्मचारी संशय रहित हो जाता है। उसके समीप वह प्रश्न नहीं रहता, वह परमात्मा की पगडण्डी को ग्रहण कर लेता

है। कोई भी वाक् ऐसा उसके समीप नहीं रहता जो अपने में, अधूरेपन में परणित हो जाता है। मैं आज तुम्हे कुछ संक्षिप्त विचार दे रहा हूँ और वह विचार यह कि हे वृहस्पति तू हमारा पिता है, तू महापिता है, कल्याण करने वाला है। हे वृहस्पति! तू ऊर्ध्वा में रहने वाला है। हे वृहस्पति तू हमारा कल्याण करने वाला है, तू ज्ञान का पुञ्ज कहलाता है, तू आन्नदमयी स्रोत कहलाता है, तू हमारे हृदयों में प्रवेश हो करके, तू हृदयग्राही, हृदय प्राणम्वृहे तू हृदय में प्राण-प्रतिष्ठा को धारण करने वाला है।

हे प्रभु! हम तेरी प्रातःकाल की पवित्र वेला में तेरी उपासना कर रहे हैं। तू उपासना का एक स्रोत है। एक महान् है, एक पवित्रतम् है। हे प्रभु! मैं कहाँ जाऊँ, मैं एक शूद्र हूँ, तेरे ही राष्ट्र में विद्यमान हूँ। प्रभु आप जो हैं ऊर्ध्वा में वृहस्पति बन करके रहते हैं, ध्रुवा में विष्णु बन करके रहते हैं। उदीची में आप, उत्तरायण में आप सोम बन करके रहते हैं, पश्चिमायन में आप वरुण बन करके रहते हो और दक्षिणायन में आप देखो इन्द्र बन करके रहते हो। आप देखो प्राची में, पूर्व दिशा में आप अग्नि बन करके रहते हो। **प्रभु आपके भिन्न-भिन्न नामोकरण की मैं उपासना नहीं कर सकता, प्रभु मैं तो अपने में मौन होना चाहता हूँ।** तेरा राष्ट्र इतना नितान्त है कि तेरे राष्ट्र का मैं भ्रमण भी नहीं कर सकता। हे प्रभु! मैं अन्त में तेरी उपासना, तेरे को सर्वत्रता में दृष्टिपात करके अन्त में मैं मौन हो गया हूँ।

यह है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा शेष चर्चाएँ कल प्रकट करेंगे। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

दिनाँक : 31 जुलाई, 1985
समय : प्रातः 7 बजे
स्थान : श्रीमती पुष्पा नैय्यर
चन्डीगढ़

।। ओ३म् ।।

वाजपेयी-याग

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महत्ता का वर्णन किया जाता है क्योंकि जितना भी यह जड़-जगत् अथवा चेतन्य-जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है। क्योंकि प्रत्येक वेद मन्त्र के गर्भ में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन है जिस भी काल में ऋषि-मुनियों ने अथवा विचारक पुरुषों ने एक-एक वेद मन्त्र के ऊपर अध्ययन करना प्रारम्भ किया तो एक-एक वेद मन्त्र में ब्रह्माण्ड की विवेचनाएँ और परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान उसमें निहित है। तो इसीलिए हमारा प्रत्येक वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन कर रहा है अथवा उसके गुणों का गुण-वादन, उसके गुणों की प्रतिभा, उसके गुणों का दिग्दर्शन प्रायः उन विचारक पुरुषों को होता रहा है, जिन्होंने वैदिक ज्ञान के ऊपर अनुसन्धान अथवा अन्वेषण किया। तो इसीलिए हमारा प्रत्येक वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गान गा रहा है अथवा उसके गुणों का उद्घोष कर रहा हैं वह मेरा देव कैसा अनुपम है? जिस भी वस्तु के ऊपर तुम चिन्तन करना प्रारम्भ करोंगे उसी में वह अनन्तमयी दृष्टिपात आने लगता है। वह जो मेरा प्यारा प्रभु जो सृष्टि का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है वह इतना अनुपम है, उसकी महत्ता में इतनी विचित्रता है कि वह देवत्व कहलाता है। परम्परागतों से ही मानव उस

परमपिता परमात्मा का अनुसन्धान करता रहा है अथवा उसको अपना इष्टदेव स्वीकार करता हुआ उसकी महिमा का गुणगान गाता रहता है।

याग और मानव

आज का हमारा वेद मन्त्र इससे पूर्व जो शब्दों की विवेचना हो रही थी, हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का वर्णन किया गया है। इससे पूर्व काल में हम कन्या याग का वर्णन कर रहे थे, और भी भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे अग्निष्टोम याग की चर्चाएँ आती हैं, राजा और प्रजा दोनों सम्मिलित हो करके अग्निष्टोम याग को रचाते हैं और अपने राष्ट्र की प्रतिभा और राष्ट्रीयता को ऊँचा बनाने के लिए तत्पर हो जाते हैं। जैसा हमारे यहाँ कन्या याग का वर्णन आया नाना प्रकार के लोकों का वर्णन आता रहता है। कन्या याग के सम्बन्ध में तीन प्रकार के लोकों की चर्चा आयीं। हमारे यहाँ देवलोक, पितृ लोक और कुल लोक की भी चर्चाएँ आती रहती हैं। हमारे यहाँ वैसे तो नाना वंशों की चर्चाएँ हैं परन्तु आज का हमारा वेदमन्त्र क्या कहता है? वेद मन्त्र कहता है अग्निष्टोम याग के सम्बन्ध में, वाजपेयी यागों के सम्बन्ध में अपनी विवेचना देता है। जैसे कन्या यागों में तीन लोक कहलाते हैं। इसी प्रकार वाजपेयी याग में भी तीन प्रकार के लोकों की चर्चाएँ आती रहती हैं। हमारा सामूहिक यह जो लोक है इसमें मानव अपने जीवन को ऊँचा बनाने में लगा रहता है। नाना प्रकार के योगाभ्यासों में लगा रहता है और अपने मानवीय जीवन को ऊँचा बनाना चाहता है। प्रत्येक मानव की आकांक्षा लगी रहती है। संसार का प्रत्येक प्राणी यह चाहता है कि मैं सुखद बन जाऊँ। मेरा मानव जीवन मृत्युञ्जयवादी बने। मानव मृत्यु के लिए सदैव अपने मानवीय जीवन में कल्पना करता रहता है और यह विचारता रहता है कि मैं मृत्युञ्जय बन करके मृत्यु को विजय करूँ। परन्तु विचार यह आता है कि मृत्युञ्जय कैसे बनेंगे? हमारे यहाँ वैदिक साहित्य में जब मानव प्रवेश करता है तो वह मृत्यु के सम्बन्ध में अपनी उड़ाने उड़ने लगता है और यह विचारता है कि

यह जो नाना प्रकार के याग हैं यह मानव को मृत्युञ्जय बनाते हैं। क्योंकि **याग में तपस्या है, पूजा है, मानवीयता है।** इस प्रकार के यागों की विवेचनाएँ वैदिक साहित्य में परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में प्रायः रत्त होता रहा है। यह परम्परागतों से यानि वर्तमान के युग में तो हम प्रवेश नहीं कर रहे हैं। हम केवल परम्परागतों के अतीत के उस दर्शन में प्रवेश करते हैं जहाँ ऋषि-मुनि, अनुसन्धानवेत्ता और राजा अपने में अनुसन्धान करते रहे हैं।

महाराजा अश्वपति के यहाँ वाजपेयी याग

मेरे प्यारे! विचार क्या है कि वाजपेयी याग में राजा और प्रजा दोनों मिल करके सम्मिलित हो करके अपने में याग करते हैं, उड़ाने उड़ते रहते हैं। विचित्र उड़ान उड़ते रहते हैं। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में महाराजा अश्वपति के यहाँ वैज्ञानिकों ने एक समय प्रार्थना की और कहा कि प्रभु! आप अपने राष्ट्र में एक वाजपेयी याग की रचना कीजिए। वाजपेयी याग को हम बुद्धिमानों के द्वारा जानना चाहते हैं। तो महाराजा अश्वपति ने ऋषियों, वैज्ञानिकों के विचार श्रवण करके उद्घोष करके उन्होंने एक याग का आयोजन किया और उन्होंने यज्ञशाला क्रियता में निर्माण की तो नाना ऋषिवर निमन्त्रण के कथनानुसार उस राजा के याग में विद्यमान थे। उद्दालक गोत्रीय ऋषि विश्वश्रवा रेणुकेतु और मुनिवरो! महर्षि भारद्वाज अपने विद्यालय के ब्रह्मचारियों के सहित महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज और भी नाना ऋषि-मुनियों का एक समूह एकत्रित हुआ। महाराजा अश्वपति के यहाँ जब याग की रचना होने लगी, ऋषि-मुनि अपनी-अपनी स्थलियों पर जब विद्यमान हो गए, वाजपेयी याग का प्रारम्भ हुआ। उस वाजपेयी याग में जब वेद मन्त्रों का उद्घोष होने लगा तो वेद के आचार्यों ने प्रश्न करना प्रारम्भ किया। राजा ने ऋषि-मुनियों से प्रश्न किया कि भगवन्! वेद का मन्त्र यह कहता है कि गौ के बछड़े को हम हुत करना चाहते हैं, हम उसको बलि करना चाहते हैं। ऋषि-मुनियों ने जब राजा के इन वाक्यों को श्रवण किया तो उन्होंने कहा गऊ के बछड़े का अभिप्राय

केवल यह नहीं है कि हम अग्नि में उसको हुत करना चाहें। यह जो वायुमण्डल की अग्नि है जो सूर्य के साथ में तपायमान हो रही है, उस अग्नि में हम इसको तपाना चाहते हैं। वृष्टि के रूपों में हम अन्नाद की वृत्तियों में धारण कराना चाहते हैं। वेद का वाक्य आगे कहता है कि यह जो पृथ्वी है यहीं तो उसको हुत किया जाता है। तो बछड़े के हुत का वर्णन आया तो उसका निराकरण करने के लिए ऋषि-मुनियों ने यह किया कि वृष्टि होने पर गऊ का बछड़ा पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करता है, वेद का मन्त्र कुछ ऐसा कह रहा है। वहीं गर्भ नाना प्रकार की वनस्पतियों को लेकर के राष्ट्र के समीप आ जाता है जिससे राष्ट्र उन्नत होता है और मानव समाज में एक महत्ता का दर्शन होने लगता है।

राजा ने जब यह श्रवण किया तो कहा बहुत प्रियतम। तो वेद का मन्त्र कुछ कह रहा है मानव उसके रूपों में कुछ जान रहा है। जब यहाँ वाजपेयी यागों का, अग्निष्टोम यागों का वर्णन आया जिस भी काल में ऋषि-मुनियों ने इसके ऊपर विचार-विनिमय करना प्रारम्भ किया, तो नवीन-नवीन ऊर्ध्वा में ज्ञान की उपलब्धि मानव के समीप होने लगी। तो विचार-विनिमय क्या? **हमारे वैदिक साहित्य के स्तर पर क्या मानवीय धाराओं में प्राणी की हिंसा करके अपने धर्म की कोई रक्षा करना चाहे तो वह ऊर्ध्वा में वाम मार्ग कहलाता है।** तो आज मैं विचार यह देने आया हूँ कि हमारे यहाँ विशुद्ध रूपों से प्रत्येक वेद मन्त्र के ऊपर अन्वेषण करना चाहिए अथवा विचार-विनिमय करना चाहिए। महाराजा अश्वपति के यहाँ याग प्रारम्भ होने लगा। वेद मन्त्र सु-हृदय उद्घोष रूपों से वेदों का उद्गीत गाया जाने लगा। तो जब उद्गीत गाया जा रहा था तो राजा अश्वपति के यहाँ उस याग का प्रभाव यह हुआ कि मेघ-मण्डलों से भीनी-भीनी वृष्टि प्रारम्भ हुई और वृष्टि के प्रारम्भ होते ही उस समय गऊ के बछड़े की बलि का वर्णन आया। मैं आज उस संदर्भ में जाना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल यह है कि हम अपने जीवन को ऊँचा बनाने के लिए मृत्युञ्जय बनना चाहते हैं। मृत्यु को कौन प्राप्त होता है और मृत्युञ्जय कौन बनता है? मृत्यु को

वह प्राप्त होता है जो मानव अपने मार्ग को त्याग देता है और कुमार्ग को अपना लेता है वह मृत्यु को आह्वान कर रहा है और जो मृत्युञ्जय बनना चाहता है, अपने अन्तर्हृदय में जो आत्म-याग हो रहा है, **अपने हृदय में जो ज्ञानाग्नि प्रदीप्त करके याग करता है वह मृत्युञ्जय बनने के लिए तत्पर होता है।** हमारे यहाँ जहाँ वाजपेयी यागों में राजा और प्रजा का वर्णन आता है वहाँ राष्ट्र और प्रजा में यह भी आता है कि राजा को चाहिए वह बुद्धिमान, बुद्धिजीवी प्राणियों की रक्षा करने वाला हो और **जितना बुद्धिजीवी प्राणी इस संसार में निष्पक्ष अपना क्रियाकलाप करता है वह और कोई नहीं कर पाता।** आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता प्रियता में होने चाहिएँ। आध्यात्मिक विज्ञान अपने में अनूठा बन करके रहा है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता मृत्युञ्जय बन करके रहा है, मृत्युञ्जय कैसे बनता है? वह अपनी मानवीय धारा को विचित्रता में ले जाता है, जैसे एक मानव अन्वेषण कर रहा है।

मृत्युञ्जय बनने का मार्ग

एक समय मुझे स्मरण है महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में कुछ ऋषिवर गाड़ीवान रेवक मुनि के द्वार पर पहुँचे। गाड़ीवान रेवक मुनि से यह प्रश्न किया गया कि महाराज! मानव अपने को मृत्युञ्जय बनाना चाहता है, वह कैसे बन सकता है? गाड़ीयान रेवक मुनि महाराज ने कहा कि **संसार में जो भी मानव मृत्युञ्जय बनना चाहता है वह दार्शनिक बने। दर्शनों की प्रतिभा को जानने वाला बने।** दर्शन क्या है? अपनी मानवीयता का दर्शन करना चाहिए कि तुझे कैसा बनना है? तू कौन है? वह विचार मानव के समीप आते हैं। जब संसार में तू इस परमात्मा के जगत् में आया तो क्यों आया और जाएगा तो क्यों जाएगा? दो ही प्रश्न मानव के समीप आते रहते हैं। तो गाड़ीयान रेवक मुनि ने कहा, यह दोनों प्रश्न ऐसे हैं जिनको गम्भीरता से विचारना है। उनके आश्रम में नित्य-प्रति अध्ययन होता रहता था, अध्ययन आध्यात्मिकवाद का और मृत्युञ्जय पर होता रहता था। गाड़ीयान रेवक मुनि ने तो यह कहा कि मृत्यु अपने में कोई रहस्यत्तम नहीं है। क्योंकि

मृत्यु अपने में कोई वाक्य की रचना नहीं कर सकती। मृत्यु मनुष्य का अज्ञानतामयी एक शब्दार्थ है। ज्ञान और वेद में तुम पहुँचोगे अथवा विज्ञान के स्तर पर पहुँचोगे तो वैज्ञानिक रहस्यत्तमों में भी मृत्यु का अपना कोई अस्तित्व नहीं है। आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी अपने को यह स्वीकार करते हैं कि वास्तव में कोई मृत्यु नहीं है। जो साधकजन हैं, जो आत्मा और परमात्मा की आभा में ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ते रहते हैं और मोक्ष की पगडण्डी को पान करना चाहते हैं तो वहाँ भी मृत्यु का कोई अवृत नहीं बन पाता। जैसे एक मानव कहीं आक्रमण करता है तो वहाँ के प्राणीमात्र को यह ज्ञान हो जाता है कि तेरे पर आक्रमण हो रहा है, चाहे परोक्ष में प्राणी हो चाहे अपरोक्ष में हो।

सूक्ष्म-धारा

एक समय ऋषि के आश्रम में वेद गान हो रहा था। तो वेदों की ध्वनि को पान करने के लिए कहीं से सर्पराज आ गया और उस ध्वनि को श्रवण करने लगा। एक ब्रह्मचारी के हृदय में धृष्टता आई कि मैं इसको मृत्यु को पहुँचाना चाहता हूँ जिससे इसका शरीर और आत्मा दोनों भिन्न हो जाएँ, ऐसा क्रियाकलाप मुझे बनाना है। क्योंकि वह हिंसक प्राणी है, वह इस उद्घोष को पान करने नहीं आया। यह हमें नष्ट करने के लिए आया है। सर्पराज उस मानव की तरङ्गों को जान गया। जब उसके हृदय से तरङ्गों का उद्घोष हुआ अथवा उद्गीत हुआ तो उसको जान गया। जानने का प्रयास यह हुआ कि सर्पराज वहाँ से धीमी-धीमी गति करने लगा। जब गति करने लगा तो उसके विचार आते ही उसकी तरङ्गें सर्पराज के हृदय को स्पर्श कर गयीं और सर्पराज वहाँ से गमन करता है। जहाँ पृथ्वी में उसकी विलिया बनी हुयी थी उसमें वह अपने को प्रविष्ट कर गया। तो विचार-विनिमय क्या? मानव को इतनी सूक्ष्म धारा बना लेनी चाहिए कि उसके विचारों का आदान-प्रदान होता रहता है। विचारों में इतनी सूक्ष्मता होती है कि दूसरा प्राणी भी उसकी अन्तर्धारा को पान कर जाता है। हिंसक प्राणी भी उन विचारों को अपने में पान करता रहता है। साधारण प्राणी भी

अपने में विचारता रहता है कि मेरे पर कोई आक्रमण कर रहा है। तो विचार-विनिमय क्या कि गाड़ीवान रेवक के आश्रम में साधक अपनी साधना में परणित होते रहे।

ममतामयी-जगत

एक समय ऐसा मुझे स्मरण है, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वारा ब्रह्मचारी कवन्धि कुछ अनुसन्धान कर रहे थे। आध्याम्मिक विज्ञान के ऊपर अन्वेषण कर रहे थे कि मैं विज्ञान के आङ्गन में तो पहुँच गया हूँ, परन्तु मैं आध्यात्मिक अपने को बनाना चाहता हूँ। आध्यामिक विज्ञान में कितना बल है, कितनी शक्ति है, मैं उसे जानना चाहता हूँ। तो ब्रह्मचारी कवन्धि साधना करता हुआ प्रत्येक वेद मन्त्र के ऊपर अन्वेषण भी करता रहता था। तो विचार क्या, एक समय जब वह साधना कर रहे थे, मनस्तत्त्व और प्राणस्तत्व दोनों का मिलान कर रहे थे, वायुमण्डल में प्रवेश करना चाहते थे, वायु जिन तरङ्गों को अग्नि की धाराओं में से अपने में धारण कर लेती है और वही वायु उसको अन्तरिक्ष में प्रवेश करा देती है। इस के ऊपर ब्रह्मचारी कवन्धि कुछ अनुसन्धान कर रहे थे कि मैं इन तरङ्गों को जानना चाहता हूँ। **ब्रह्मचारी कवन्धि सोमवृतिका ऋषि के पुत्र थे।** एक समय उनकी माता रुग्ण हो गयी। जब रुग्ण हो गयी क्योंकि माता ने बालक को शिक्षा दे करके उसे ब्रह्मवर्चोसि का पालन कराते हुए वह ब्रह्मचारी ही बन गए थे। ऋषि के आश्रम में माता अपने हृदय से पुकार करने लगी और अपने अन्तर्हृदय में प्रवेश करने लगी, उद्घोष होने लगा कि मेरा पुत्र जो ब्रह्मचारी है उसका मेरे से मिलन होना चाहिए। मेरा अन्तरात्मा उसे पुकार रहा है। हे प्रभु! तू मेरे पुत्र को मेरे से मिलान करा। माता की वह जो पुकार थी, हृदय में वह जो विडम्बनामयी विचारधारा थी, वह विचार वायुमण्डल में प्रवेश करने लगे। वही तरङ्गें घोषित होती हुयी दण्डक वनों में ब्रह्मवचारी कवन्धि के हृदय को स्पर्श करने लगीं। माता कहीं है पुत्र कहीं है, जो उद्घोषमयी वाणी है, तरङ्गें हैं, वह ब्रह्मचारी के अन्तर्हृदय में प्रवेश होने लगीं। मन को अन्तरात्मा में कवन्धि लगा

रहा है परन्तु लग नहीं पा रहा है। वह प्राण के साथ मिलान करना चाहता है परन्तु उसको वह ममतामयी लगने नहीं दे रही। ब्रह्मचारी बड़ा आश्चर्य-चकित हो करके गाड़ीवान रेवक से बोले कि हे प्रभु! मेरा अन्तरात्मा इतना कुशल है। मैं बहुत समय से साधना कर रहा हूँ अन्तरात्मा में मैं साधक बन करके साधना के क्षेत्र में प्रवेश हो गया हूँ। परन्तु मेरा अन्तरात्मा भी विचित्र है। आज मेरा मनस्तत्त्व साधना में क्यों नहीं परणित हो रहा है? जब ब्रह्मचारी कवन्धि ने यह कहा तो योग समाधि में वह समाधिष्ठ हो गए मन और प्राण दोनों को एकाग्र करते हुए वह अपने बाहरीय और आन्तरिक ब्रह्माण्ड में प्रवेश कर गए। जब आन्तरिक ब्रह्माण्ड में प्रवेश किया तो ब्रह्मचारी को कोई ममतामयी तरङ्गें स्पर्श कर रही हैं। ब्रह्मचारी को गाड़ीवान रेवक ने कहा कि मैंने अपनी साधना में अपने मस्तिष्क में मैं ब्रह्माण्ड के कुल में प्रवेश कर गया था कोई ममतामयी तरङ्गें स्पर्श कर रही हैं तो ब्रह्मचारी कवन्धि ने अपने में चिन्तन करना प्रारम्भ किया। जब गम्भीर मुद्रा में प्रवेश हो गए तो यह प्रतीत हुआ और वेद का मन्त्र स्मरण आया और वेद मन्त्र यह कह रहा था **यदि तुम ममता में प्रवेश हो गए हो और ममतामयी विचार तुम्हारे अन्तर्हृदय को स्पर्श कर रहे हैं। तो कोई न कोई ममता वाला जिसको तुमने सन्तुष्ट नहीं किया है वह तेरे समीप तरङ्गों का उद्घोष कर रहा है।** वह तरङ्गें तेरे समीप आ रही हैं।

यह विचार आते ही कवन्धि ने वेद मन्त्र को ले करके वहाँ से भ्रमण किया। महर्षि भारद्वाज मुनि के द्वार पर पहुँचे। भारद्वाज मुनि से कहा कि प्रभु! यह वेद मन्त्र क्या कहा रहा है? वेद मन्त्र यह कहता है कि तरङ्गें किसी को तरङ्गित कर रही हैं। मुनिवरो! महर्षि भारद्वाज मुनि ने मन्त्र पर यह विचार दिया। ब्रह्मचारी सुकेता से कहा कि ब्रह्मचारी! यह वेद मन्त्र क्या कह रहा है? उन्होंने कहा, भगवन्! मैं तो उसको नहीं जानता हूँ। इसके ऊपर बल दिया जा सकता है। विचार होने लगा तो यह विचारा गया और भारद्वाज मुनि के यहाँ एक यन्त्र था और यन्त्र में भावनाओं का भी दिग्दर्शन होता था। तरङ्गें चल रही

हैं। इन तरङ्गों को ग्रहण किया जा रहा है। जब वह तरङ्गें दृष्टिपात आयीं तो यन्त्र में ममतामयी माता का चित्र दृष्टिपात आ रहा है और चित्र के साथ तरङ्गें आ रही हैं। उन्होंने कहा, ब्रह्मचारी! तुम्हारी तो माता ममतामयी है, रुग्ण है। ब्रह्मचारी कवन्धि भ्रमण करते हुए माता के समीप पहुँचे। अयोध्या में उसके मातृ और पितृ वास करते थे। वह अयोध्या में पहुँचे तो माता प्रसन्न हो गयी। उसे आलिङ्गन किया। वह रुग्ण थी परन्तु उसकी ममतामयी तरङ्गें उस साधक को बाध्य कर रही हैं। अन्तर्हृदय से दूरी कर रही हैं। विचार-विनिमय क्या? यह तो ममतामयी जगत् है यह बड़ा अनुपम है। इसीलिए **वाजपेयी साधकों ने कहा है कि परमात्मा के सिवा किसी को विचारों ही नहीं यदि कोई साधक बनना चाहता है।** राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है तो प्रजा और परमपिता परमात्मा को दोनों को स्मरण करना चाहिए। यदि वह न्यायालय में विद्यमान है और वह पुत्र को ममता की दृष्टि से दृष्टिपात करता है तो उसका न्यायालय भ्रष्ट हो जाएगा। उसका न्यायालय पवित्र नहीं रहेगा। इसी प्रकार साधक परमपिता परमात्मा का गुणगान गाने में लगा रहे। **जहाँ तक अपना ज्ञान है, तप है, जो ममतामयी प्राणी अङ्ग-सङ्ग रहने वाले हैं उनको जानकर सन्तुष्ट करना चाहिए।** उनकी साधना में परिवर्तन होता रहता है।

साधक

आज मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार तुम्हें यह देने के लिए आया हूँ कि वेद का मन्त्र क्या कहता है। महाराजा अश्वपति के यहाँ जो वाजपेयी याग हो रहा था मैं उसकी चर्चा कर रहा था। वाजपेयी याग में जो साधक होते हैं वह अपने को बलि में प्रदान कर देते हैं, ओत-प्रोत कर देते हैं। **बलि का अर्थ है कि अपने को समर्पित करना है।** प्रभु को अपने में समर्पित कर देते हैं। वही तो साधक ब्रह्मज्ञानी बन करके परमपिता परमात्मा के राष्ट्र को अपने में धारण करके मृत्युञ्जय बन जाते हैं। संसार को वह साधक दृष्टिपात करता हुआ भी दृष्टिपात नहीं कर रहा है। श्रवण करता हुआ भी श्रवण नहीं

कर रहा है। वेद का ऋषि कहता है, आचार्यजन कहते हैं कि हमें नाना प्रकार के यागों का चयन करना चाहिए। हमें साधक बनना है परमात्मा का जो राष्ट्र है यह बड़ा अनुपम है, बड़ा विचित्र है। इसमें **प्रत्येक मानव को अपने में साधक बनना चाहिए।** बेटा! जहाँ मैं कन्या याग का वर्णन कर रहा था वहाँ आज हमारा वाक्य वाजपेयी याग में चला गया। वाजपेयी याग किसे कहते है जहाँ राजा और प्रजा दोनों मिलन करते हुए दोनों का एकोकीकरण हो जाए। एकोकीकरण हो करके कर्त्तव्य का पालन किया जाए और कर्त्तव्यवाद में निहित हो करके उस याग में परणित हो करके वायुमण्डल को हमें पवित्र बनाना है और विचारों से अपने गृह को विचित्र बनाना है। उसके पश्चात् हम अपने में साधक बन सकते हैं। जब प्रजा यह चाहती है कि हमारा जीवन सुखद हो, राजा यह चाहता है कि मैं प्रजा को सुखद बनाना चाहता हूँ तो जैसे भगवान मनु ने कहा है और भी आचार्यों ने, राजाओं ने कहा है कि **राजा को अपने में शासन करना चाहिए। प्रजा पर शासन नहीं करना चाहिए। अपनी मनोनीत इन्द्रियों पर शासन करना चाहिए।** जब इन्द्रियों पर राजा शासन करने लगता है तो प्रजा के वैभव को सँग्रह करने वाला नहीं बनता। वह केवल अपनी अन्तरात्मा को ऊँचा बनाता हुआ अपने विचारों को शासन में ऊँचा करता हुआ, कला-कौशल करके उदर की पूर्ति करता है और प्रजा को सुखद बनाने के लिए अपने को संलग्न करता रहता है अपने को समर्पित करता रहता है, राजा वह महान् होता है जिस राजा के राष्ट्र में एक महापुरुष पहुँचा हो, महापुरुष की बुद्धि ज्यों की त्यों बनी रहे। राष्ट्र में जा करके उसे अभिमान न छा जाये। यदि महापुरुष को अभिमान आ गया तो मानो कि राजा के द्रव्य में किसी प्रकार का सँग्रह है। वह किसी प्रकार की विडम्बना है। इसी विडम्बना में परणित हो करके साधक और ऋषि अपनेपन को समाप्त करके अभिमान की मात्रा बलवती बन जाती है और वह अभिमान ही आध्यात्मिक विज्ञान-वेत्ताओं को मृत्यु में परिवर्तित कर देता है। वही तो मृत्यु है, वह मृत्यु नहीं आनी चाहिए।

सबसे प्रिय याग

मेरे पुत्रो! मैंने तुम्हें आज यह विचार दिया। महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में कोई भी ऐसा द्रव्य नहीं आता था जो किसी का सँग्रह किया हुआ हो या किसी के शृंगार को हनन करके द्रव्य आया हो, या किसी की अन्तरात्मा को दुःखित करके। राजा स्वयँ शासनवादी बन जाता है इन्द्रियों पर तो प्रजा उससे पहले बन जाती है और जब प्रजा और राजा दोनों अनुशासन में लग जाते हैं तो शान्ति की स्थापना हो जाती है। वह याज्ञिक बन जाते हैं। वह सबसे प्रिय याग कहलाता है। वेद का आचार्य यह कहता है कि वह राजा अपने में पवित्र है और प्रजा को ऊँचा बनाने में लगा हुआ है। अपनी अन्तरात्मा को हुत कर रहा है, समर्पित कर रहा है और उस धारा में रत्त हो गया है जिसमें जाने के पश्चात् एक आनन्द की स्थापना हो जाती है। राजा का तो एक ही नृत्य रह जाता है कि आततताईयों को ज्ञान के द्वारा शिक्षा दे या उसे अस्त्रों से दण्डित करे, यही राजा का कर्त्तव्य है। इससे प्रजा की रक्षा होती है। प्रजा की रक्षा उस काल में होती है जबकि राजा स्वयँ अपने जीवन में महान् बन जाता है। महाराजा अश्वपति ने अपने विचारों में भिन्न-भिन्न प्रकार का उद्घोष किया है। मैं परमात्मा को अपने में लाना चाहता हूँ। परमपिता परमात्मा का जो रचा हुआ अनुपम जगत् है इसके ऊपर वह अनुसन्धान करता है, अन्वेषण करता हुआ उसको विचारता रहता है कि मैं वास्तव में परमात्मा के अमूल्य जगत् को जानना चाहता हूँ। उसमें लगा हुआ है। वह साधक बन करके साधना करता रहता है। प्रत्येक अणु और परमाणु में प्रभु को दृष्टिपात कर रहा है। लोक-लोकान्तरों को उसमें पिरोया हुआ स्वीकार करता है। वह माला बन जाती है और वह माला का सूत्र बन जाता है। तो वह मृत्युञ्जय बन जाता है जो इस धारा में लगा हुआ है।

विचार क्या कि वाजपेयी याग में हिंसा नहीं है। वाजपेयी याग में महानता है। राजा को ऊँचा बनना है। गऊ के बछड़े से पृथ्वी के गर्भ में बीज की स्थापना करना है जिससे नाना प्रकार का विशुद्ध अन्न

उत्पन्न हो करके माता वसुन्धरा की गोद में अपने में खिलवाड़ कर रहा है, अपने को स्वीकार कर रहा है। वसुन्धरा बना करके उस अन्नाद को पान करता है। खाद्यान्न को ऊँचा बना रहा है। आज का विचार हमारा क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम अपने में ऊर्ध्वा में क्रियाकलाप करते चले जाएँ। वाजपेयी यागों को अपने में धारण करते चले जाएँ, जिससे राष्ट्र वैज्ञानिक बने, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता बने। राजा के राष्ट्र में विज्ञान की ऊँची उड़ान हो। यह चर्चा तो मैं कल प्रकट करूँगा। महाराजा अश्वपति के यहाँ आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों रूपों से नृत्य करता रहा है। मानव की नाना प्रकार की विचारों की जो तरङ्गें हैं वह मानव को तरङ्गित करती रहती हैं। यदि वह शुद्ध है तो शुद्ध वायुमण्डल में तरङ्गित हो जाती हैं और अशुद्ध तरङ्गें उत्पन्न हो करके वायुमण्डल दूषित हो जाता है।

आज का विचार क्या कहा रहा है कि प्रत्येक प्राणी जानता है कि तेरे पर कोई आक्रमण कर रहा है। उस आक्रमणकारी को, उसकी तरङ्गों को जान लेता है। वह प्रयत्नशील बन करके प्राणों की रक्षा करता है। अपने में पवित्र बन करके धारामयी बनाता है। आज का विचार क्या कह रहा है कि हम मृत्युञ्जय बनना चाहते हैं। इस प्रकार मानव दर्शन को अपने समीप लाने का प्रयास करो। परमपिता परमात्मा को अपना देव स्वीकार करके वह जहाँ भी विद्यमान हो, प्रत्यक्ष रूप से प्रतिभा का उद्घोष हो। उसकी तरङ्गों में तरङ्गित होता हुआ अपने में पवित्र बन जाए। प्रत्येक वेद मन्त्र हमें उद्घोषण कर रहा है, हमें प्रेरणा दे रहा है और कह रहा है कि जितना भी यह जड़-जगत् है, चेतन्य-जगत् है सर्वत्र में परमपिता परमात्मा निहित है। अपनी आभा नियुक्त कर रहे हैं। अभ्युदय हो रहा है, धारामयी बन करके अपने जीवन को महान् और पवित्र बनाया जा रहा है। यह जगत् इसी प्रकार एक-दूसरे में पिरोया हुआ है। परमपिता परमात्मा एक महान् सूत्र है, जिस सूत्र में हमारा शब्द भी पिरोया हुआ है, तरङ्गें भी पिरोई हुई हैं, परमाणु भी

पिरोया हुआ है, अणु भी उसमें पिरोया हुआ है। परमाणुओं में अणुओं के विभाजन करने से ब्रह्माण्ड उसमें निहित होता रहता है। ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आता रहता है। तो बेटा! इसी प्रकार तरङ्गों में भी ब्रह्माण्ड है और यह ब्रह्म ही ब्रह्म हमें दृष्टिपात आ रहा है। इसीलिए **वेद का ऋषि कहता है तुम जहाँ भी विद्यमान हो, प्रभु को सदैव दृष्टिपात करते रहो।**

राजा अपने को जब अनुशासन में बना लेता है तो द्वितीय राजा भी आध्यात्मिकवाद में, अनुशासन से परणित हो जाता है। सर्वत्र पृथ्वी मण्डल एक-दूसरे से प्रेरणा ले करके अपने में स्वर्ग बन जाता है, आनन्दमयी बन जाता है। यह आज का विचार समाप्त। शेष चर्चाएँ कल प्रकट करेंगे। आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

दिनाँक : 18 सितम्बर, 1985
समय : रात्रि 8 बजे
स्थान : ई-31 लाजपत नगर-3
नई-दिल्ली

आवश्यक सूचना

सभी सदस्यों को यौगिक प्रवचन मासिक पत्रिका भेजी जा रही है। पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी आजीवन/वार्षिक सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में हमें एक सप्ताह के बाद लिखें। सूचना मिलने पर पत्रिका पुनः प्रेषित करेंगे।

।। ओ३म् ।।

एक ही सूत्र के दो मनके

वेद का आचार्य कहता है महाराज अश्वपति के राष्ट्र में वैज्ञानिको ने कहा प्रभु! उस समुद्र के तट पर हमने यह निर्णय किया है कि याग ही विज्ञान है और विज्ञान ही याग है। इस विज्ञान में एक महानता है। महाराजा अश्वपति ने जब यह श्रवण किया तो नत-मस्तक हो करके राजा ने कहा, **हे वैज्ञानिको! तुम राष्ट्र के प्राण हो।** क्योंकि यह जो विज्ञान है, वह राष्ट्र का प्राण है। **जो वैज्ञानिक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता होते हैं वह राष्ट्र का मस्तिष्क कहलाता है।** मुनिवरो! राष्ट्र का मस्तिष्क और राष्ट्र का प्राण दोनों का परस्पर समन्वय होता हैं राजा ने कहा हे वैज्ञानिको! इस याग का विज्ञान में अपना-अपना महत्व माना गया है। उन्होंने जब पुनः यह प्रश्न किया तो उन्होंने कहा प्रभु! यह जो विज्ञान है यह परमपिता परमात्मा की एक अनुपम धारा है यह जो अनुपम धारा है इसका समन्वय श्रद्धा से माना गया है और जब श्रद्धामयी का जन्म होता है क्योंकि परमपिता परमात्मा जहाँ यज्ञमयी स्वरूप है, यज्ञशाला का निर्माण करने वाले हैं वहाँ वह विज्ञानमयी स्वरूप भी हैं और वह यागमयी स्वरूप भी हैं। दोनों का मिलान हो करके चेतना में एक सूत्र में दोनों पिरोये जाते हैं। वह दोनों एक ही मनके के सूत्र में है और वह सूत्र क्या है? वह चेतनामयी सूत्र है और वह चेतना में कटिबद्ध है जड़ रूप में है। चेतना के आङ्गन में गति कर रहा है।

मेरे प्यारे! जब राजा को यह निर्णय कराया तो राजा आश्चर्यचकित हो गए। उन्होंने कहा यह मैं कैसे स्वीकार करूँ कि दोनों एक ही सूत्र के मनके हैं और वह मनके जड़ और चेतना के रूप में हैं। उन्होंने कहा, हाँ भगवन्! उन्होंने कहा, वह कैसे? एक मनस्तत्त्व के रूप में है और

एक प्राणस्तत्व के रूप में है। **प्राणस्तत्व का जो रूप है वह चेतना से समन्वय है और मन का जो स्वरूप है वह जड़ के आङ्गन में गति करता है यह प्राण की सहायता से कटिबद्ध हो रहा है।** इसी प्रकार जितना भी यह भौतिक विज्ञान है, प्रकृतिवाद है चाहे वह किसी रूप में क्यों न हो परन्तु वह एक जड़वत् के रूप में निहित रहता है। इसी की सहायता से प्रकृति अपने में गति करती है। प्राण में क्या है? वह चेतना है। वह प्राणस्तत्व माना गया है जहाँ प्राण का समन्वय मन के साथ हुआ तो साधक साधनावादी बन जाता है। जहाँ विज्ञान से इसका समन्वय हुआ तो वहाँ मन प्राण में कटिबद्ध हो करके एक-एक परमाणु अपने में गतिशील होना प्रारम्भ हो जाता है और वह अपने में जब गतिशील होना प्रारम्भ हो जाता है तो वह जगत् अपनी-अपनी धारा में गतिशील बन करके नृत्य करने लगता है। कोई भी बुद्धिमान आ करके किसी भी प्रकार की उड़ान उड़ने लगता है वही उसको प्राप्त हो जाता है। उसी में वह अपनी धाराओं को अपने में धारण करने लगता हैं इस प्रकार जब ऋषियों ने, वैज्ञानिकों ने, राजा को यह निर्णय कराया कि मनस्तत्त्व, प्राणस्तत्व दोनों का यह जगत् है। वैज्ञानिक मन के आङ्गन में प्रवेश करता है, चेतना को कटिबद्ध कर लेता है, उसमें सम्मिलित कर लेता है तो यह नाना प्रकार के यानों का निर्माण करने लगता है। यन्त्रवादी बन जाता है। एक धारा में रत्त होता हुआ अपनी विचित्र धारा अस्वत में तत्पर हो जाता है। महाराजा अश्वपति के यहाँ राजा और वैज्ञानिक दोनों अपने में चर्चाएँ करते रहते थे और वैज्ञानिक इन वाक्यों को कह कर शान्त हो गए। जब शान्त हो गए तो राजा अश्वपति ने यह कहा कि हे वैज्ञानिको! यह मेरे विचार में यथार्थ रूपों में परणित हुआ है।

पूज्यपाद गुरुदेव

।। ओ३म् ।।

रेतस और प्राण

मेरे प्यारे! देखो एक-एक पिण्ड को जब रेतस बनाया जाता है तो ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगता है। एक-एक पिण्ड, एक-एक परमाणु को जब रेतस बनाया जाता है तो अणु के रूप में, परमाणु के रूप में अग्नियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। उन अग्नियों को वैज्ञानिक ले करके नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता है। कोई यन्त्र राष्ट्र को भस्म कर देता है। कोई यन्त्र मानव को ही नष्ट करता है, कोई यन्त्र अन्तरिक्ष में जा करके वायुमण्डल को दूषित बना देता हैं वही तो रेतस से पिण्ड बना है और पिण्ड से रेतस बना है और रेतस दूषित हो गया है। तो मुनिवरो! देखो यह तो बड़ा विचित्र एक गहन जगत् है, जिसके ऊपर मैं नाना प्रकार की विवेचना प्रायः देता रहता हूँ। देखो मैं यागों की चर्चा करता रहता हूँ, याग में परणित होता रहता हूँ। विचार यह आता रहता है कि यह कैसा अनुपम जगत् है जिसके ऊपर मानव अपने में वृत्तियों को धारण कर रहा है, अपने में ओत-प्रोत हो करके अपनी धारा को जानना चाहता है। मृत्यु से विजय होना चाहता है। जब तक यह रेतस बनना, पिण्ड बनना समाप्त नहीं होता तब तक इसे मोक्ष की पगडण्डी भी प्राप्त नहीं होगी, वहाँ क्योंकि वह एक रस होना है उसमें, तो एक रस हो करके ही तो गति कर सकता है।

मेरे प्यारे देखो! आज मैं विशेष विवेचना नहीं देने आया हूँ। केवल तुम्हें यह वाक् प्रकट कराने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को यह जान लेना चाहिए। इसी से तो विवेक उत्पन्न होता है और विवेक से ही मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त होती है। जब तक मानव इसको जान नहीं सकेगा, यह वास्तव में क्या है, जिसके ऊपर हम इतने अपने को रत्त कर रहे हैं यह क्या है, तो इसके ऊपर विचार-विनिमय जब तक नहीं होगा, यह नाना प्रकार का विज्ञान क्या है, आध्यात्मिकवाद क्या है, इसमें सबमें प्राण-क्रिया अपने में क्रियाकलाप कर रही है, प्राणों से गुथा हुआ जगत् है। प्राणों से पिण्ड बना हुआ है, प्राण ही रेतस कहलाता है, प्राण ही भिन्न-भिन्न रूपों में दृष्टिपात आता है। आज मैं जब बाह्य-जगत् में प्रवेश करता हूँ तो बाह्य-जगत् में भी एक-एक कृतियों में प्राण ही प्रतिष्ठित हो रहा है। एक-एक अणु की प्रतिभा में देखो वह प्राणसत्ता ही तो है जिसको वह अग्नि अन्तरिक्ष में प्रवेश करके लोकों पर आक्रमण करता है।

पूज्यपाद गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. जितनी भी चेतना है, उस चेतना का जो स्रोत है वह परमपिता परमात्मा ही कहलाया गया है।
2. मानव के विचारों के लिए सुन्दर अन्न की आवश्यकता होती है।
3. यह जो जल है इसके आश्रित प्राण रहने वाला है और अन्न के अधीन मनिराम को तृष्णा होती रहती है।
4. आत्मा का उत्थान उस काल में होता है जब मानव जगत से उदासीन हो जाता है।
5. यह जो संसार है यह एक कल्पनावादी वृक्ष है यहाँ जैसी भी कल्पना करोंगे वैसे ही बन जाओंगे।
6. जब व्यक्ति आत्ममुखी हो जाता है तो व्यक्ति की आत्मा निर्मल हो जाती है।
7. प्रवृत्तियों पर निरोध उस काल में होगा जबकि हमारा अपनी इन्द्रियों पर सँयम होगा।
8. यजमान उसे कहते है जो यज्ञ का मान करता है यज्ञ का मान कौन करता है? जो अपनी अन्तरात्मा का मान करता है।
9. हमारे यहाँ ब्रह्म में प्रवृति होना ही तो याज्ञिक कहलाया गया है।
10. ज्ञान में ही ब्रह्म है।
11. मानव का जीवन भी एक सुन्दर यज्ञवेदी ही माना गया है।
12. हमारे यहाँ परम्परा से ही वह हृदयरूपी सुन्दर यज्ञवेदी है जिसमें योगीजन ध्यानावस्थित हो जाते हैं।
13. हमारे यहाँ वेदों का जो ज्ञान है वह आनन्दमय कहलाया गया है।
14. यज्ञशाला में चार स्थान होते है–ब्रह्मा, उद्‌गाता, अध्वर्यु और यजमान का होता है।
15. जैसे परोपकार के लिए वरस्पतियों का जन्म होता है ऐसे ही जो अध्वर्यु होता है उसका भी ऐसा ही विचार होता है ऐसा ही त्याग होता है।

।। ओ३म् ।।

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

मास्टर ऋत्विक

श्रीमति ब्रजबाला धर्मपत्नि श्री राजकिशोर त्यागी निवासी ग्राम मकनपुर, जिला गाजियाबाद, उ.प्र. ने प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी अपनी प्रिय पौत्र ऋत्विक सुपुत्र श्रीमति अञ्जली एवम् श्री हरिओम त्यागी जी के जन्मदिवस की शुभ बेला के आगमन पर 1101 रु. का सात्विक सहयोग समिति के प्रकाशन के कार्य के लिए प्रदान किया है जिसके लिए समिति हृदय से आभार प्रकट करती है।

श्री त्यागी जी व उनकी धर्मपत्नि प्रतिदिन प्रभात बेला में दैनिक अग्निहोत्र काफी लम्बे समय से करते चले आ रहे हैं और उसके पश्चात् पूज्यपाद गुरुदेव के प्रवचनों का स्वाध्याय भी निरन्तर करते हुए अपनी स्थिति को ऊर्ध्वागति प्रदान करने में संलग्न हैं। इसके साथ-साथ प्रत्येक रविवार को अपने गृह पर एक डॉ. साहब की निशुल्क सेवा में सभी आने वाले मरीजों को अपनी तरफ से फ्री दवाइयों का वितरण करते हुए अपनी प्रवृत्तियों को मानव कल्याण के लिए एक साकार रूप का दर्शन प्रस्तुत कर रहे हैं।

यह परिवार बड़ी उदारता से धार्मिक कार्यों में अपना सहयोग सभी क्षेत्रों में बनाए हुए है और विशेषकर पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के कार्यों में श्री गांधी धाम समिति लाक्षागृह, बरनावा, जिला-बागपत और वैदिक अनुसन्धान समिति, दिल्ली को निरन्तर तन, मन व धन से सहयोग करने में संलग्न हैं।

श्रदालु परिवार के सभी सदस्यों को पुनः से आभार प्रकट करते हुए समिति पौत्र के जन्मदिवस की बारम्बार शुभकामनाएँ प्रदान करते हुए परिवार के सभी सदस्यों के लिए सुख, शान्ति, दीर्घायु एवम् सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	100.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की व वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मात-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	50.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
*70.	ईश्वर मिलन	50.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	80.00
*73.	नैतिक शिक्षा	50.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गुणगान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' के रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900
website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

आज का हमारा वेद का पाठ, यह उच्चारण करता चला जा रहा था। हमारे यहाँ उस परमपिता परमात्मा की महिमा का जहाँ गुणगान गाया जाता है, तो वास्तव में जब उसको तत्त्व-तत्त्व से विचारने लगते हैं तो हमें यह प्रतीत होने लगता है कि यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड वसुन्धरा का स्वरूप माना गया है। क्योंकि वसुन्धरा महामना प्रभु को भी कहते हैं, जिसके गर्भस्थल से यह सर्वत्र जगत विराजमान हो रहा है, जिसकी प्रक्रियाओं से यह पृथ्वी क्रियामान हो रही है, सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसी के आश्रित भ्रमण कर रहा है। आज हम उस परमपिता परमात्मा को भी वसुन्धरा के रूपों में परणित किया करते हैं और उसका गुणगान गाते हैं गुणों का अनुवाद करते हुए कहा करते हैं कि वह जो प्रभु है जो संसार का रचयिता है, जो क्रियात्मक क्रिया में ला रहा है परन्तु वही जगत में व्याप रहा है उसी की महान ज्योति से हम सर्वत्र ब्रह्माण्ड में, सर्वत्र प्राणी, प्राणी मात्र उसी की ज्योति से व्याप रहा है, उसी के आङ्गन में रमण कर रहा है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 46 : अंक : 544
जनवरी 2018

मूल्यः
दस रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2015-2017
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-01-2018
Published on 5th day of the same month